INTERNATIONAL RESEARCH JOURNAL OF INDIA
ISSN 2454-8707 VOLUME-II,ISSUE-III, NOV-

# साहित्य में पुष्प–माल्य संस्कृति

डॉ. भरत सिंह
प्रोफेसर, हिन्दी विभाग मगध विश्वविद्यालय, बोधगया, बिहार, (भारत)

विदेशी पुष्पों तथा उनसे बननेवाले उपहार उपकरणों के कारण हमारी धरती में उपजे रंग–विरंगे सुगंधित फूलों की कलात्मक संस्कृति आज समाप्त हो रही है। नाट्यशास्त्र, (23/11) तथा राजनक रुय्यक (सहृदय लीला–2/10) जैसे ग्रंथ एवं विद्वानों के अनुसार हमारे पूर्वज वितत, संघात्य, ग्रत्थिम, प्रलम्बित, मुक्तक, मंजरी तथा स्तवक नाम से नयनाभिराम रंग–विरंगे सुरभित पुष्पों से निर्मित आठ प्रकार की मालाएँ धारण करते थे। पगड़ी, सिर या शरीर के अन्य अंगों पर लपेट कर पहनी जानेवाली पुष्पमाल वेष्टित[1], शरीर के एक भाग में फैली विशाल माला वितत[2] नाम से सुख्यात था पुष्प समूहों से ग्रथित संघात्य एवं बीच–बीच में विभिन्न कलियों गाँठों से गुंथी पूर्णरूप से दिखने वाली अवलंबित नाम से ज्ञात थी। केवल एक ही पुष्प से गुंथी मुक्तक, रंग–विरंगी कलियों के पुष्प गुच्छों की मंजरी तथा कलात्मक एक पुष्प गुच्छ की माला स्तवक कहलाती थी। महाभाष्य[3] तथा वास्त्यायन मुनि विरचित 'कामसूत्र' (1–4–5) के अनुसार उनके युग के भारतवासी सूर्योदय पूर्व उठकर दातून, स्नान, अनुलेपन के पश्चात् पुष्प माला अवश्य धारण करते थे। उस अवधि में स्वर्ण–रत्नों के कीमती आभूषणों के स्थान पर कमर, मणिबन्ध (कलाई), उर्वी (भुजा), ललाट, कर्ण एवं शरीर के अन्य अवयवों को सुन्दर कलात्मक मालाओं के पुष्पाभरणों से सजाया जाता था। 'पार्वती के तन पर लाल मणि को लज्जित करने वाले अशोक के पत्तों के सोने की चमक को घटाने वाले कर्णिकार पुष्पों और मोतियों की माला के सदृश्य उजले सिन्धुवार के वासन्ती फूलों के आभूषण सजे थे[4]। वे पुष्प मालाओं के कलात्मक मनोरम पुष्प आभूषणों से नरूशिख अंलकृत पार्वती की ओर संकेतित करते हैं– 'ऐसी लग रही थी, जैसे फूलों के गूच्छों के भार से झुकी लाल कोपलों वाली चलती–फिरती लता हो[5]।' 'कादम्बरी' के अध्ययनोपरान्त दृष्टिगत होता है कि हमारे पूर्वज चम्पा–चमेली के पुष्पों से गुंथी कलात्मक मालाओं के शौकीन थे। राजा से लेकर रंक तक चम्पा–चमेली की सुरभित मालाओं को महान मंगलकारी मानकर धारण करते थे। बुके, बास्केट, फ्लावर पिन, फ्लावर वर्ड, फ्लावर स्टिक नामाधारी आजकल विदेशी अनुकरण पर बनने वाले पुष्प उपहार–उपकरणों में टाटारोज, डचरोज, ग्लाइडोलिलया, जरवेरा, कारनेशन, एन्यूटियम, आरकिट, एरिक आदि के पुष्पों तथा फिशपाम, पेनपाम, बोतल, ब्रश, चाइनापाम, ड्राइसिन्हा नामक से प्रचलित घास से सुसज्जित किया जाता है, जिसकी कीमत हजारों तक होती है। आर्किड ग्लेडियोलस, लिलियम कारनेशन, रोज बड्स जैसे विदेशी फूल तथा इनसे बनने वाली मालायें लोगों को बड़ी तेजी से भाने लगी हैं। भारत की मंगलकारी महान माल्य संस्कृति की पुष्प मालाओं में पुण्डरीक (श्वेत कमल), कोकनद (लाल कमल), इन्दीवर (नील कमल), चम्पक, नवमल्लिका (नेवारा), श्रीपदी (रायबेल), अशोक मल्लिका (मोतिया), माधवी (वासन्ती), वकुल (मौलसिरी), केतकी (केवड़ा), कदम्ब, कुब्जक (कुंजा), यूथिका (श्वेत जूही), हेम पुष्पिका (पीत जूही), मालती (श्वेत चमेली), मधु मल्लिका (पति चमेली या बेला), कर्णिका (पीत कनेर), करवीर (लाल कनेर), मधुक (महुआ), शतपत्री (गुलाब) जैसे रंग–बिरंगे मधुर सुगंधि बिखेरने वाले पुष्प से गुँथी कलात्मक मालाएँ हमारे पूर्वजों के जीवन को, अनेक उत्पातों और विपत्तियों से रक्षा कर स्नेह सौहार्द और माधुर्य से भर देती थी। इन मालाओं के पुष्पों के बीच–बीच में कुश, काश, दूर्वा, जौ का पत्ता, धान का पत्ता, बल्वज, कमल पत्र की संवर्तिका (नवीन पत्ते) को पूरे शिल्प सौन्दर्य के साथ गूंथा जाता था। पद्मपुराण[7] में जीवन के लिए मंगलकारी सात प्रकार की कुश का उल्लेख मिलता है। पुष्प, माला में गुंथकर धारण करते समय शरीर का स्पर्श करते हैं। यह स्पर्श लालित्य और ओज प्रदायक करता है। उसकी सुगंधि विपत्ति का निवारण कर दीर्घजीवी बनाती है। ऋषिवर अग्निवेश का कथन हैं – 'पुष्प मालाओं को धारण करने से शरीर में वृष्यता (प्रीति) आती है, सुगन्धि और सुन्दरता बढ़ती है आयु का हित होता है, शरीर की पुष्टि और बल की वृद्धि होती है, मन प्रसन्न रहता है और शरीर की अशोभा नष्ट होती है।[8] सुश्रुत संहिता में पुष्प मालाओं के प्रभावक स्वरुप को उल्लिखित करते हुए कहा गया हैं 'फूलों की माला धारण करने से भूतबाधा; विषबाधा से बचाव, ओज की वृद्धि, हितकारी सौभाग्य एवं प्रीति में अभिवृद्धि होती है।''[9] हमारे पूर्वज ऋषिओं–मुनियों ने गहन अन्वेषण तथा अपने दिव्यानुभव ज्ञान से यह सिद्ध कर दिखाया कि जो व्यक्ति नियमित माला धारण करते हैं, उनसे दरिद्रता सदैव दूर रहती है। साथ ही लक्ष्मी की सदैव कृपा आयन्त होती रहती है। इससे समाज में मान–प्रतिष्ठा बढ़ने के साथ–साथ, मन–कालुष्य समाप्त होकर आत्मीयता तथा सद्गुणों की अभिवृद्धि होती है। पतंजलि के अनुसार उनके युग में नियमित पुष्प मालाएँ धारण करने वाले व्यक्ति की समाज में बड़ी प्रतिष्ठा थी। उन्हें स्रग्वी जैसे आदरणीय शब्द द्वारा संबोधित किया जाता था।[10] महाभारत के जरासंध वध पर्व–(21/51) में श्रीकृष्ण

कहते हैं–'जो पुष्प माला धारण करने वाले हैं, उनमें लक्ष्मी का निवास ध्रुव है।'' कालिदास के युग में ग्रीष्म में बर्फ के समान सफेद पुष्पों की मालाएँ धारण की जाती थी। वर्षा में कुटज, अर्जुन, केतकी तथा मालती पुष्प से युक्त अशोक की मालाएँ पहनना शुभ माना जाता था। 'हरिवंश पुराण' के अनुसार वर्षा ऋतु में श्वेत पुष्प तथा कदम्ब पुष्प की माला मानव के लिए फलदायक माना गया है। हेमन्त में चन्दन रस सुवासित फूलों की मालाएँ एवं शिशिर में इत्रों से पूरित मालाएँ धारण करना शुभ माना जाता था। वर्षा ऋतु में 'भागवत पुराण'(10/35) में श्रीकृष्ण को कुन्दकली का हार पहिने यमुना तट पर विचरण करते दर्शाया गया है। 'पद्मपुराण' के अनुसार चैत्र में कमल–चमेली, वैशाख में केतकी के पत्ते, आषाढ़ में कनेर, लाल रंग की पुष्प, कदम्ब, कमल, तुलसी दल, अशोक, सावन में दूर्वादल, कनेर, चम्पा तथा श्वेत पुष्प, आश्विन में युथिका (जूही), मालती (चमेली) तथा कमल पुष्प निर्मित मालाएँ पहनना अति पवित्र तथा मंगलकारी माना गया है। बसन्त में चन्दन की महक शुभ तथा काम्यक मानी गई है। इसीलिए कालिदास चन्दन रस सिक्त विभिन्न पुष्पों की मालाओं का बसन्त ऋतु में खुलकर वर्णन करते हैं। बसन्त पंचमी के दिन हमारे देश में कुवलय के नीले पुष्प धारण करने का रिवाज था। 'सरस्वती कण्ठाभरण' के रचनाकार का अभिमत है कि सुवसन्तक के दिन बनिताएँ नीले कुवलय की माला धारण कर सारे गाँव को जगमगा देती थी। यह पुष्प कमल से थोड़ा छोटा तथा गुणों में कमल के समकक्ष ही होता है।[11]

प्रेम और शोक जैसे विपरीत भावों में हमारे यहाँ पैरों तक लटकती वितत मालाएँ पहनी जाती थीं। कवि माघ ने बलराम तथा रेवती के प्रेम प्रसंग में बलराम को कमल की पैरों तक लटकी माला पहिने बताया है।[12] भागवत (20/12/5) के अनुसार गोपियों के साथ प्रेममयी रास लीला की पावन अवसर पर श्री कृष्ण ने पैरों तक लटकी सुगंधित पंचपुष्पों की वैजयन्ती माला धारण कर रखी थी। प्रेम प्रसंग के अवसर घुटने या पैरों तक लटकती लम्बी मालाओं के पुष्पों के बीच–बीच में कोमल दूर्वा अंकुर या पुष्प वृक्षों की कोमल पत्तियों को ऐसी खूबसूरती से गूंथा जाता था कि उसका सौन्दर्य द्विगुणित हो जाता था। दूर्वा अंकुर या कोमल पत्तियों से गुंथी मालाएँ अति पवित्र तथा सौभाग्यकारी मानी जाती थी। कादम्बरी[13] में बाणभट्ट ने नन्दन कानन की वनदेवियों के द्वारा ऐसी मालाओं का वर्णन किया है। यह माला नाथद्वारा में श्रीनाथजी के स्वरुप पर आज भी थाग की माला नाम से चढ़ाई जाती है। 'मानसोल्लास (3/7/45) में इस माला का परिचय 'शतपत' नाम से दिया है। इसमें अमरुक, पाटल (लाल फूल), नव मल्लिका (नेवारा) के पुष्पों को गुँथा जाता था। लम्बी पैरों तक लटकती मालाएँ हमारे यहाँ शोक या उत्सर्ग के समय भी पहनी जाती थी। इसीलिए हर्षचरित में बाण ने मरणव्रत को जाती हुई प्रभाकरवर्धन की महारानी यशोवती को पैरों तक लटकती लाल पुष्पों की माला धारण करने की ओर संकेत है।[14] 'मृच्छकटिक'[15] में चारुदत्त फांसी प्रसंग में फाँसी लगने से पूर्व अपराधी द्वारा गले में लाल पुष्पों की माला धारण का संकेत है। पुष्प माल्य निर्माण कला की जानकारी साधारणतया सभी को होती थी। बाजार में भी पुष्प मालाओं की दुकानें होती थीं। यहीं से मनपसन्द कलात्मक पुष्प मालाएँ खरीदी जा सकती थी। हरिवंश पुराण में श्री कृष्ण तथा बलराम को गली (वीथी) में स्थित दुकान से पुष्प मालाएँ खरीदते बताया गया है।[16] प्राचीन साहित्यिक ग्रंथ प्रमाणित कर रहे हैं कि पूरा भारत के युवा समाज में मधुमल्लिका (पीत चमेली या पीत बेला) तथा वकुलश्री (मौलसिरी) के कलात्मक मालाएँ बहुत लोकप्रिय थी। इन्हें प्रेमी–प्रेमिकाएँ परस्पर पहनाकर इनकी महासुगन्ध में डूब लौकिक जीवन–रस का सच्चा आनन्द प्राप्त किया करते थे। प्रेम में डूबा युवा समाज इन पुष्पों की मालाएँ बाजार से नहीं खरीदता था, न ही उसका कलात्मक निर्माण किसी शिल्पी से करवाता था। वह प्रेम में आनन्दातिरेक से स्वयं चयनित पुष्पों की माला बनाकर अपनी प्रिया को भेंट करता था। भवभूति ने ऐसी प्रेमासक्त मालाओं के निर्माण के लिए रमणीयता, प्रवीणता तथा रचना चातुरी का संगम आवश्यक बतलाया है, जिसके आधार पर माधव अपनी प्रिया मालती के लिए स्वयं पुष्प माला बनाता है।[17] विष्णु पुराण के रचनाकार ऋषिगण अपनी तपस्या के बल से समझाते हैं कि सुगन्धित पुष्पों की माला धारण कर भोजन करने से खाया हुआ अन्न शुभ और आयुवर्धक होता है। इसलिए प्राचीन काल में कुलवधुएँ अपने हाथ से माला गूँथकर भोजन से पूर्व अपने पतियों को पहनाया करती थी।[18] भागवत पुराण में श्री कृष्ण की आठों रानियाँ एवं अनिरुद्ध को उसकी प्रिया उषा, भोजन से पूर्व मधुल्लिका के सुगंधित पुष्पों की अपने हाथों से गूंथी कलात्मक माला पहनाती है।[19] आयुर्वेद के अनुसार मौलसिरी तथा मधुल्लिका के पुष्पों से मस्तक, मुख, रुधिर, विष तथा पित्त विषयक विकारों का शमन होता है।[20] 'हर्षचरित' में सरस्वती प्रेम प्रसंग में युवा दाधीच को तथा हर्ष जन्म के समय नाचते–कूदते युवकों को सुगंधित मौलसिरी के फूलों की माला धारण करने का उल्लेख है।[21] इससे प्रमाणित होता है कि पूरा भारत के युवा समाज में उक्त माला बहुत लोकप्रिय थी। रघुवंश के अनुसार कालिदासकालीन भारत में इन्दीवर (नीलकमल) तथा पुण्डरीक (श्वेत कमल) की मालाएँ बहुत शुभ मानी जाती थी, जिसे हमारे पूर्वज धारण करते थे।[22] भागवत पुराण में वर्णित है कि इन्दीवर पुष्प ऐश्वर्य, धर्म, यश, लक्ष्मी, ज्ञान एवं वैराग्य जैसे गुणों को विकसित करने के कारण धर्म–अर्थ–काम–मोक्ष पुरूषार्थों का प्रदायक है।[23] इसीलिए कालिदास ने 'कुमार संभव' में ऋषियों द्वारा शिव–उमा विवाह प्रस्ताव पर जगत–जननी पार्वती को इन्दीवर पुष्प की कलियों को गिनते बताया है।[24] महाभारत में मल्लिका, उत्पल, कमल (श्वेत) और चम्पा की कलात्मक कलाओं को शुभ बताया गया है।[25] इन पुष्पों के कलात्मक गजरे तथा वेणी–मालाएँ निर्माण में निष्णात होने के कारण ही द्रौपदी को सैरन्ध्री (प्रसाधिका) का पद प्राप्त हुआ था। वामन पुराण के अनुसार शिव के तृतीय नेत्र से भस्म हुए कामदेव पाँच टुकड़ो में टूटकर पृथ्वी पर गिरे धनुष से चम्पक, वकुल, पाटल (लाल फूल), मल्लिका (बेला का एक भेद), जाति (चमेली) पुष्प की उत्पत्ति हुई है। कमल, अशोक, आम, नवमल्लिका तथा इन्दीवर (नील कमल) पुष्पों के पाँच बाणों वाला होने को कारण कामदेव को पंचेषु कहा गया है।[26] इन पुष्पों की मालाएँ सदैव काम प्रदीप्त करनेवाली हैं।

एक मगही लोकगीत में नींबू, अनार और नारंगी के पौधे लगाने तथा उसमें फलों के लग जाने का वर्णन गर्भत्व का प्रतीक है। पुत्रोत्पत्ति के बाद गुलाब और कुसुम के फूलों के प्रतीक के द्वारा बच्चे की छठी के अवसर पर पहने जाने वाले रंगीन वस्त्रों की अभिव्यक्ति एक गीत में दर्शनीय है –

कहमा ही लेमुआ के रोपव, कहमा अनार रोपव है।
कउन बन फुल हई गुलबवा त कउन बन कुसुम रंग है।
कउन देइ के रँगतइ चुनरिया त देखते सोहावन हे।।
कुँज वन फुल हइ गुलबवा त कुरखेत कुसुम फुलइ हे।
सुगही के रँगव चुनरिया त देखत सोहावन हे।।[27]

एक मगही गीत में पुत्र–प्राप्ति हेतु विविध विधि–विधानों द्वारा भगवान शंकर के आराधन का वर्णन है। इसी प्रसंग में धतुरे फूल का उल्लेख है –

देवइन धतुरवा के फूल भाँग घोंटि लायब हे।[28]

मगही लोकगीत में श्रीकृष्ण–जन्म एवं उनके अद्वितीय सौन्दर्य वर्णन के क्रम में वैजयन्तीमाला धारित रूप भी पठनीय है –

भादो रैन भयामन दिसि धन घेरे है।
रोहिनी नछतर तिथि अठमी लाल गोपाल भेले हे।।
किरीट मुकुट घनस्याम से कुंडल कान सोभे हे।
ललना संख चकर गदा पदुम चतुरभुज रुप किए हे।।
उर वैजयन्ती के माल से देखि रुप मन मोहे हे।[29]

एक मगही सोहर गीत में गर्भिणी के नौ महीनों की स्थिति चित्रित है। साथ ही स्नान के पश्चात् गर्भाधान का वर्णन है। गर्भिणी अपने कंत के संग फूल की सेज पर सोयी हुई है–

नेहाय धोबाइ के माँग फारल अगट चन्नन सिर धरे।
फूल सेज विछाय आपन कंत सँग बिहरन लगे।
चार पहर रात कामिन हिर सँग विलास करे।
चउठे पहर जब बीतल सपन एक देखल हे।।[30]

अन्यत्र एक गीत में कदली – वन में घौद लगने तथा फूले हुए गुलाब के रंग के समान 'साहब' की पाग रँगाने की बात वर्णित है–

कदली के वन में घउर लगल हे फूलल कोसूम गुलाब।
ओही रँग रँगबइ साहेब के पगिया पहिरथ होरिला के बाप।।[31]

कृष्ण–जन्म के बाद नन्दजी द्रव्यादि लुटा रहे हैं। नगर के लोग बधाई देने के लिए एकत्र हो रहे हैं। तेलिन तेल, तमोलिन पान और मालिन मालाओं को लेकर पहुँच रही हैं –

किसुन जलम अब में, बधावा अब लेके चल
गावत मंगलचार सभे मिलि लेके चल ।।
तेलिन लयलक तेल तमोलिन वीरवा।
मालिन लौलक गुथि हार, जसोदा जी के आँगन।।[32]

मगही भाषी क्षेत्र में प्रचलित विवाह संस्कार में चौका सजने के समय गेय गीत के प्रथम तीन पदों में उस फूलवाड़ी–रक्षा का वर्णन है। इसमें दुल्हे के माथे पर चढ़नेवाली मौर के पौधे उगे हुए हैं। मौर और माला पहनकर जब दुल्हा दुलहिन के साथ चौके पर बैठता है तब दुलहिन पक्ष के लोगों ने उन्हें घेर लिया –

आरी के हेंठे हेंठे लगि गेल फूलवारी कान्हर बछरु चरावल हे।
फेरु–फेरु अहो कान्हर, अपनो बछरुआ, चरि जएतन घनी फलवारी हे।
चेली चरि जइहें बेलि चरि जइहें चम्पा के ममोरले डाढ़ हे।।
काहे से गाँथव हो कान्हर फूल के मउरिया।
काहे से गाँथव हो कान्हर चम्पाकली हरवा।
दुल्हा–दुल्हिन चौका चलि बइठल, बराह्मन वेद उचारल हे।।[33]

एक मगही गीत में मंडपाच्छादन, कलश स्थापन दीप प्रज्वलन विधि का वर्णन है। इन विधियों से स्वर्गास्थित पितरों को निमंत्रित कर वंश वृद्धि की कामना की जाती है। तात्पर्य यह है कि विवाह वंश वृद्धि के लिए ही प्रमुख महत्व रखता है। मंडप–कलश स्थापन हेतु प्रयुक्त पुष्पादि सामग्री का उल्लेख दर्शनीय है–

ओकरा में धरवई पलविया ओकरा में धरवइ पन–फूलवा, सुनहु जदुनन्न हे।

माथे का मौर अनार कली तथा गुलाब की परपुड्डियों से सुशोमित है –

बाबू के मउरिया में लगले अनार कलिया।
अनार कलिया हे गुलाब झरिया।
बाबू धीरे से चलिह ससुर गलिया।।
बाबू सरहज से बोलिह अमीर बोलिया।
बाबू धीरे से चलिह ससुर गलिया।।
बाबू के जोड़वा में लगले अनार कलिया।
अनार कलिया में गुलाब झरिया।
बाबू धीर से चलिह ससुर गलिया।।[34]

प्राचीन मगही समाज समरसता का समाज था। इसमें जाति–प्रथा तो थी, किन्तु उनकी अपेक्षा सभी प्रकार के संस्कारों में थी। इसलिए उन्हें 'पवनियाँ' (प्राप्त करनेवाले लोग) कहा जाता है। ब्राह्मण, नाई, धोबीन, मालिन, चमार, कहार इसी कोटि में परिगणित है। इसका अर्थ है कि इन सबों को वृति लेने की प्रथा समाज में थी और आज भी है। एक गीत में इसे देखा जाय –

अपनी महलिया से मलिया मउरी गुथ हइ।
जहाँ कवन बाबू खाड़ जी।।
हम तोरा पूछूँ मलियवा हो भइया।
केते दूर बसे ससुरार जी।।
तोर ससुररिया बाबू मउरिया से खैंचल।
चुनमें चुनेठल तोर दुआर जी।।[35]

सारांश यह है कि सम्पूर्ण समाज समरस होकर जुड़ा हुआ था और एक दूसरे के उत्सव में सम्मिलित होता था। इसमें वर्णाश्रम व्यवस्था के संस्कार जुडे हुए थे। आठवें दशक के आसपास भारतीय हिन्दू समाज को अगड़ा–पीछड़ा में विभक्त किया गया जिसका दंश दिनानुदिन बढ़ता जा रहा है। जनतंत्र की यह सबसे बड़ी बुराई है कि सत्ता के लिए समाज की समरसता को समाप्त कर दिया गया है। प्रत्येक पाँच वर्ष पर इसका हीनतम रुप आते जाता है। समाज को समरस बनाकर श्रद्धापूर्वक परस्पर सहयोगी बनाना सर्वाधिक अपेक्षित है, इसके बिना शांति–स्थापन संभव नहीं है। संस्कार हिन्दू जीवन के अभिन्न अंग हैं। इनके सोलह रुप प्रचलित हैं। उनका किसी–न–किसी रुप में आज भी महत्व है। संख्याबल की गणना आज हिन्दू समाज का विन्छिन्न होना एक बड़ी समस्या है। नीति और न्याय बोलने की वस्तु तक सीमित होती जा रही है, करने या अपनाने तक नहीं। फलतः भ्रष्टाचार और स्वार्थ इतना बढ़ता जा रहा है कि आतंकवाद से भी यह ज्यादा कठिन समस्या है। इतना ही नहीं कोई राष्ट्रीय योजना सफल नहीं हो पाती है।

मगही में टोना गीत उस समय गाया जाता है जब दुलहिन–दुल्हे को टोना टोटका से बचाये जाने की विधि करवाती है। मगही लोकजीवन में फूल को यंत्र रुप में धारण करने का भी उल्लेख है –

बाबा के अंगना लवँग केर गछिया।
फूल चुअए चारो कोना, रे मेरो टोना।।
फूल चुन–चुन ताबीज बनैलो।
बाबू दुलरइता दुल्हा बाजू रे मेरो टोना।।[36]

एक गीत मी दुल्हे के सिर पर पहनाया जानेवाला वह मौर जो फूलों की लड़ियों में गूँथकर बनाया है। इसकी लड़ियाँ मुँह के आगे झुमती रहती है। यह उल्लेख एक गीत में दर्शनीय है–

सोने के सेहला गढ़ा द मोरे बाबा।
अउ जड़ा द हीरालाल जी।।
सोने के सेहला बाबू मरमो न जानूँ।।
कइसे जड़इबे हीरालाल जी।।
तोहरे ससुर जी के साँकर गलिया
झरि जइतो सेहला के फूल जी।।
आगे–आगे जइतन बाबा जी साहेब।
सेकर पीछे मामा सोहागिन जी।
सेकर पीछे जइतन छोटकी बहिनिया।
चुनि लेतन सेहला के फूल जी।।[37]

पति अपनी दुल्हन से रात में कोहबर में आने का अनुरोध करता है, लेकिन वह घरवालों के देख लेने के बहाने आने में अपनी असमर्थता प्रकट करती है। गीत में 'झिंगनी' के फूल के खिलने से सूर्यास्त होने का संकेत है –

बेरिया डुबन लगल फलल झिंगनियाँ।
आजु मोरा अइहधानि हमर कोबहरिया।।38

मनोवांछित पुष्प के लिए पति–पत्नी में नोक–झोंक हुई। पति ने उन पुष्पों का पता पूछा। पत्नी को प्रसन्न करने के लिए पति उस पते पर पुष्प लाने जाता है –

अउरी झउरी करथिन दुलरइतिन सुगवे हे।
हम लेबइ इलइची फूलवा हे।
हम लेबइ जाफर फूलवा हे।।
कहाँ हम पयवो इलयची फूलवा हे।
कहमा जाफर फूलवा हे।
हमर नइहर परभु इलइची फूलवा हे
अउरो जाफर फूलवा हे।
पहुना बहाने परभु नइहरवा जइह हे।
भौरवा रुपे फूलवा लेइ अइह हे।
बगिया में अयलन दुलरइता सरवा हे।
लवँगिया डरवा सरवा बाँधी देलन हे।
सोवरन सँटिया सरवा मारी देलन हे।।[39]

सजे सजाय सेज पर सोते समय पति की बातों से रुठकर पत्नी मायके चल पड़ती है –

अहे मोरा पिछुअड़वा लवँगिया के गछिया।
लवँग चुअले सारी रात हे।
अहे लवँग चुनी–चुनी सेजिया डँसवलो
बीचे बीचे रेसम के डोरा हे।
अहे ताहि पइसि सुतले दुल्हा कवन दुल्हा
जउरे सजनवा केरा धिया हे।
अहे ओते ओते सुतहु कवन सुगइ।
तोरा गरमी मोरा न सोहाय हे।।

उन्हें एतना वचनियाँ जब सुनल कवन सुगइ।
रोअत नइहरवा चलि जाय हे।[40]

दुल्हे के घर में आने पर दुल्हन काँपने लगी तथा क्रोड़ में ले लेने पर उसे पसीने आ गए। उसने दुल्हे से छोड़ देने का अनुरोध किया तथा मायके भाग जाने की धमकी दी। अन्त में उसने आपने मायके के बाग से चम्पा की कली ला देने की शर्त पर वहाँ रहना स्वीकार किया–

छोड़ि देहु छोड़ि देहु हमर अँचरवा।
हम भागि जइबो अब अपन नहइखा।।
हमर नइहरवा मुं चम्पा के कलिया।
आनि देहु दुल्हा त रहम ससुरिया।।[41]

दुल्हा को सजाने और उसके रूप की प्रशंसा इस गीत में देखा जाय–

खूब बना तेरा सेहरा हाँ रे बने आज की रतिया।
लरियाँ लगाएँ सब सखिया हाँ रे बने आज की रतिया।।

चाल–चलाई की विध–विवाह के चौथे दिन सम्पन्न की जाती है। उस दिन आँगन में दुल्हे को बैठकार उसके सामने दुल्हन को श्रृंगार कर तथा सेहरा पहनाकर गीत गाते हुए घुमाया जाता है–

गले हार पेन्ह के तुम मेरी सेज पर चलि आवो।
लाड़ो को लाल बोलावे यह बाजूवन झूमता।।[42]

विवाह के अवसर पर जयमाला तथा कौतुकमाला नामक दो विशिष्ट मालाओं का साहित्यिक तथा सांस्कृतिक ग्रंथों में उल्लेख मिलता है। इसे परिणय सूत्र में बँधने के अवसर पर सुन्दरियाँ अपने जीवन साथी को पहनाया करती थी। जयमाला जीवन साथी की चयन माला थी तो कौतुकमाला एकनिष्ठ प्रेम रक्षा के लिए पहनाई जाती थी। जयमाला को मधु (पीत महुआ) पुष्पों को लाल डोरी में दूर्वा अंकुरों अथवा कुछ कलियों के साथ पिरोया जाता था। कालिदास तथा श्री हर्ष के अनुसार स्वयंवर की वरमाला पवित्र पुष्पहार लाल रोली में रंगी डोरी में पीले महुए के पुष्पों के बीच–बीच में कोमल दूर्वा अंकुरों को पिरोकर बनाया जाता था, जिसका कलात्मक सौन्दर्य रत्नावलियों तक को अभिभूत कर देता था। महाभारत में द्रौपदी कुन्दकली के सफेद पुष्पों की जयमाला से अर्जुन का वरण करती है। जयमाला के पश्चात् सुहागिन स्त्रियाँ वर–वधू को कौतुक गृह में ले जाती थी, जहाँ पर विवाह के मांगल्य के लिए पितरों तथा देवों को अनुष्ठान द्वारा आमंत्रित कर स्थापित किया जाता था।[43] कौतुक गृह में कन्या, वर को पुनः माला पहनाती थी। यह माला प्राकृत भाषा में कोदूअमालिअं तथा संस्कृत भाषा में कौतुकमाला नाम से संबोधित की जाती थी। ईस्वी पूर्व की रचना–'स्वप्नवासवदत्ता में भास बताते हैं कि उच्च कुल में उत्पन्न प्रेम तथा चातुर्य की धनी संस्कारशील सुन्दरी कौतुकमाला गूँथती थी। इस माला को कमल (श्वेत), इन्दीवर (नीलकमल), चम्पा, नव मल्लिका, वकुल जैसे काम्यक पुष्पों से गूँथा जाता था, जिसके बीच–बीच में 'अविधवाकरणम्' तथा 'सपत्नीमर्दनम्' नामक दो प्रकार की जड़ी के साथ में पिरोई जाती थी।[44] भास (वही) संकेत करते हैं कि अविधवाकरणम् से विधवा होने से मुक्ति तथा सपत्नीमर्दनम् से सौतों का निवाश हो जाता था। विवाह के पश्चात योग्य संतान की अभिलाषा की पूर्ति गार्हस्थ जीवन का सबसे बड़ा तप माना जाता था। इसलिए निर्विघ्न बालक के जन्म, उसकी दीर्घायु एवं भावी समृद्ध जवीन के लिए प्रसूति गृह का निर्माण किया जाता था, जहाँ सुगंधित पुष्पों की कलात्मक मालाओं की उपस्थिति आवश्यक होती थी। कादम्बरी में बाणभटट् कहते हैं कि सूतिका गृह को बाहर–भीतर से सफेद पुष्पों के बीच–बीच में गुंथे कोमल दूर्वा अंकुरों की सैकड़ों कलात्मक मालाओं से सजाया जाता था। सुतिकागृह के दरवाजे पर सुगंधित फूलों की मालाओं से सजा बूढ़ा बरका बांधा जाता था।[45]

पुष्प मालाओं में गूंथे जाने वाले फूल तथा गुम्फन–डोरी का अपना एक सांस्कृतिक शिष्टाचार था, जिसकी जानकारी जन साधारण तक को पूरी रहती थी। इसीलिए नगर सर्वस्व (9/1–6) ग्रंथ कहता है कि हमारे पूर्वज अनुराग में लाल, वियोग में गुरुओं तथा स्नेह के अभाव या शोक के समय काले धागों में गूंथी माला धारण करते थे। भहाभारत तथा ब्रह्मवैवर्तपुराण[46] बताते हैं कि पढ़ने–लिखने वाले व कवि–साहित्यकार सफेद पुष्पों की माला धारण करते थे। उनका विश्वास था कि श्वेत पुष्प–माला धारण करने से ही वाक् देवी सरस्वती की महती कृपा प्राप्त होती है। यही कारण है कि सातवीं सदी की रचना 'हर्षरचित' में बाणभट्ट हर्षवर्धन से मिलने घर से निकलते समय श्वेत पुष्पों की माला धारण कर यात्रा शुरू करते हैं।[47] कामसूत्र में वात्सयायन बताते हैं कि प्राचीन काल में प्रत्येक घर में गृहवाटिका होती थी, जिसमें छोटी–छोटी पगडण्डियों के सहारे कुब्जक, मल्लिका, कुरकण्टक, वासन्ती, पौधे तथा कदम्ब के वृक्ष लगाए जाते थे।[48] कालिदास मेघदूत में कहते हैं कि प्रत्येक घर में कमल युक्त बावड़ियां (गृहनदिका) तथा कुवरक वृक्ष, माधवी लता मण्डप, अशोक, मौलसिरी के वृक्ष अवश्य होते थे। इसलिए प्राचीन काल में गांवों तथा नगरों में हर घर में ताजा फूल उपलब्ध रहते थे। कंठ में माला दो प्रकार से पहनी जाती थी। एक तो सीधा कंठ में धारणा किया जाता था तथा दूसरे प्रकार से माला बाँए कंधे पर से बाँई–दाई काँख (कुक्षि) की ओर पहनने का रिवाज था, जिसे बाणभट्ट ने हर्षचरित में वैकक्ष्यक माला कहा है।[49] इस प्रकार से मालाएँ आज भी हमारे देश में मांगलिक अवसरों पर पहनी जाती है। हमारे पूर्वज उपहार में भेंट होने वाली मालाओं को अति पवित्र शुभ तथा जवीन में पुष्कल समृद्धि देने वाली मानते थे। विश्वास किया जाता था कि उपहारस्परूप दी गई माला, भेंट करने वाले तथा ग्रहण करने वाले दोनों के जीवन को कल्याण प्रदान करती हैं। इसीलिए कालिदास 'कुमार संभव' में इन्द्र–कामदेव के वार्तालाप द्वारा बताते हैं कि उनके युग में उपहार में मिलने वाली माला को बड़ी श्रद्धा तथा आदर के साथ माथे से लगाया जाता था।[50] आज मगध की महान माल्य संस्कृति समाप्त हो गई है। हम लोग जानते हीं नहीं है कि हमारे पूर्वज ऋषियों ने सदियों के चिन्तन–मनन और अपनी तपस्या के बल के प्रभाव से पुष्पों को मालाओं में गुँथकर जीवन को आनन्दमय, सौहार्दमय बनाकर ऐसी महान कलात्मक माल्य संस्कृति प्रदान की थी, जिसमें माला में गुँथे एक–एक पुष्प का रंग–महक और कोमलता अनेक विपत्तियों तथा रोगों पर विजय दिलवाकर हमारे मन को कोमल भावों से भरकर दीर्घजीवी बनाती थी। इसलिए लोग माला पहनकार दिन भर अपने कामों में लगे रहते थे। माला को पहनते ही उतारना अशुभ माना जाता था।

प्रकृति के कोमलतम उपादान और गंधयुक्त वस्तु पुष्प में जुड़ी है। सद्भावनाएँ कोमल होती हैं। उसका व्यवहार भी कोमलतम हेाता है इसके कारण वचन व्यवस्था ठीक रहती है। वचन व्यवस्था के बिना कर्म व्यवस्था विशृंखलित हो जाती है। पुष्पमाल्य संस्कृति एक प्रतीक है। इस प्रतीक में सौन्दर्य और सद्भावना पिरोई हुई है। उपर के मगही गीतों में एकाग्रता, पावनता और व्यवहारगत सौभनस्य की झाँकी मिलती है।

इसके बिना सामाजिक संरचना अधूरी रह जाती है। हम शास्त्रों को छोड़कर सिनेमा की संस्कृति में उतर रहे हैं फलतः दिल और संकोच की परम्पराएँ खुलेपन में विकृत हो चली हैं। इसे पुनः सहेजने की आवश्यकता है। शास्त्रों से जुड़कर भौतिकता को नैतिकता से सम्बद्ध करना आज की मात्र आवश्यकता है। करूणा तथा सद्भाव, परोपकार, की भावना उत्पन्न करती है आज हम लोग निष्करुण और क्रूर होकर मानवता को कलंकित कर रहे हैं।

## संदर्भ

1. शब्दसागर 9/4613
2. वही 9/4471
3. पतंजलिकालीन भारत पृ. 204
4. कुमार संभव 3/53
5. वही 3/54
6. कादम्बरी पृ. 9
7. पद्मपुराण (सृष्टि खण्ड) पृ. 167
8. चरक संहिता, सूत्र स्थान 5/96
9. सुश्रुत संहिता चिकित्सा स्थान 24/67
10. पतंजलिकालीन भारत पृ. 204
11. सरस्वती कण्ठाधरण पृ. 475
12. शिशुपाल वध 2/17
13. कादम्बरी पृ. 681
14. हर्षचरित 3/पृ. 338
15. मृच्छकटिक 10/पृ. 626
16. हरिवंश पुराण 3/11/78
17. मालती माधव 1/22
18. विष्णु पुराण 3/11/78
19. भागवत पुराण 10/63/62